पूर्वोत्तर प्रभा
(सिक्किम विश्वविद्यालय द्वारा प्रकाशित अर्धवार्षिक शोध पत्रिका)
Journal Home Page: **http://supp.cus.ac.in/**

विश्व पटल पर हिंदी तथा भारतीय संस्कृति

डॉ. अर्चना त्रिपाठी
श्री अरविन्द महिला कालेज
काजीपुर, पटना (बिहार)
Email- atripathy835@gmail.com

शोध- सारांश

हिंदी सिर्फ भारत की भाषा नहीं , वह विश्व में भी अपना स्थान बना चुकी है ।हिंदी समस्त विश्व की है। यही कारण है कि आज विश्व हिंदी दिवस के लिए एक दिन भी सुनिश्चित कर लिया है। जिस तरह हमारे भारत में 14 सितंबर को हिंदी दिवस मनाया जाता है ।उसी तरह दस जनवरी को विश्व हिंदी दिवस मनाने की परंपरा बनी। यह हिंदी केलिए गौरव पूर्ण है। विश्व हिंदी दिवस ही मनाने की शुरुआत क्यों हुई। विश्व में और भी कई भाषाएं हैं। उनके लिए कोई दिवस विशेष क्यों नहीं बना, यह प्रश्न उठता है खैर...! हमें इसकी गहराई में नहीं जाना। विश्व में हिंदी ने जो स्थान बनाया है वह खास है। इसने अपना स्थान बनाने में अलग-अलग रूपों में अपने को प्रतिष्ठित किया। साहित्य में तो शुरु से ही इसका शीर्षस्थ स्थान था। विदेशों में फिल्मों,उसके गीतों तथा नाटक के माध्यम से विकसित हुई है। किसी भी भाषा या बोली के लोग क्यों ना हो हिंदी के बिना उनका काम पूर्ण नहीं होता। भले ही उनकी हिंदी व्याकरण सम्मत या परिमार्जित ना हो, लिंग दोष बोलने में आए, उच्चारण दोष हो। हिंदी में एक सहजता सरलता है। जो इसे महत्त्वपूर्ण बनाता है ।

बीज शब्द- हिन्दी, भारतीय, संस्कृति, सनातन, विश्व

मूल लेख-

विश्व हिंदी दिवस मनाने की प्रेरणा या जरूरत हमें हुई। भारत की सनातन संस्कृति को नजदीक से गहराई से जानने की उत्कंठा ने हिंदी के प्रति एक आकर्षण पैदा किया है। जिसने सबको इससे जोड़ा। हिंदी की समझ नहीं होगी तो वे भारत की विशेषताओं उसकी तमाम सभ्यताओं को बखूबी कभी समझ नहीं पाएंगे।

अनुवाद से हम उतना नहीं जुड़ सकते। संवेदनशीलता में कमी आती है। किसी भी देश की सभ्यता, संस्कृति, पहनावा, खान पान, परम्पराओं, रीति रिवाजों को उसके इतिहास को तब तक अच्छी तरह नहीं समझ सकते जब तक कि वहां की भाषा की समझ न हो। उस पर अच्छी पकड़ न हो। अनिल जोशी अपने लेख "विश्व हिंदी दिवस के प्रणेता में लिखते हैं- "अभी हाल की तो बात थी। प्रवासी हिंदी उत्सव में ही तो अक्षरम् ने शैलेंद्र जी को (शैलेंद्र नाथ श्रीवास्तव) "विश्व हिंदी दिवस" की संकल्पना देने के लिए सम्मानित किया था।"[1] अतः यह स्पष्ट हो जाता है कि सर्व प्रथम शैलेंद्र नाथ श्रीवास्तव ने विश्व में हिंदी दिवस के लिए एक कल्पना की। वैसे राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय स्तर पर हिंदी सम्मेलन तो होते रहे समय समय पर। अब उसके लिए एक निश्चित दिन के लिए सोचना था। अनिल जोशी ने शैलेंद्र नाथ श्रीवास्तव को "विश्व हिंदी दिवस का प्रणेता" कहा है जो कि सत्य है। उन्होंने लिखा है कि शैलेन्द्र नाथ जी ने ही सबसे पहले।"एक विचार बीज को जन्म दिया और उसे फल के रूप में परिवर्तित होते देखा। उन्होंने एक विचार की प्रसव पीड़ा को सहा, भोगा था। यह उनकी हिंदी भाषा और समाज को महत्व पूर्ण देन है।"[2]

यह कहना बिल्कुल ग़लत नहीं होगा कि हिंदी को विश्व स्तर पर प्रतिष्ठित करने के लिए शैलेंद्र जी ने बहुत संघर्ष किया और इनका साथ सभी हिंदी प्रेमी ने भी दिया। जहां भी हिंदी की चर्चा होती शैलेंद्र जी अपने सुझाव दिया करते। अनिल जोशी, पद्मेश गुप्त इनके विचार व गंभीर सुझावों को लेते और मानते थे। हिंदी को व्याकरण सम्मत व परिमार्जित करने का सारा श्रेय आचार्य जारी प्रसाद द्विवेदी को जाता है। इन्होंने कठोर भाषा अनुशासन का पालन किया। आज हिंदी भारत की भाषा नहीं विश्व में भी अपना परचम लहरा रही है। इसके लिए कड़ी मेहनत की गई है और एक दिवस तय हुआ। जिसका सारा श्रेय नि: संदेश शैलेंद्र नाथ श्रीवास्तव जी को जाता है।

"2002 की लंदन यात्रा से शैलेंद्र जी के मन में एक विचार जन्म ले चुका था था। भारत में हिंदी दिवस मनाया जाता है परंतु हिंदी तो करोड़ों लोगों की भाषा है। यह सिर्फ भारत में नहीं ब्रिटेन, अमेरिका, मॉरीशस, कनाडा, त्रिविडाड, गुथाना, सूरीनाम, फिजी, दक्षिण अफ्रीका, जैसे कितने ही देशों में बोली जाती है। वे लोग हिंदी के वैश्विक संदर्भों से कैसे जुड़े? उन्हें लगा 14 सितंबर को मनाए जाने वाले हिंदी दिवस की सीमाएं हैं हमें हिंदी को अंतरराष्ट्रीय स्तर पर स्थापित करने के लिए विश्व हिंदी दिवस की संकल्पना को क्रियान्वित करना होगा। सौभाग्य से सूरीनाम के विश्व हिंदी सम्मेलन की सलाहकार समिति में शैलेंद्र जी का नाम भी था। विश्व हिंदी सम्मेलन में उन्होंने औपचारिक रूप से "विश्व हिंदी दिवस" मनायें जाने का प्रस्ताव रखा। अनुमोदन किया श्री भगवत सिंह ने प्रस्ताव पारित हुआ। अब प्रस्ताव को लागू भी करवाना था।"[3]

प्रस्ताव तो तमाम बनते हैं। पारित भी होते हैं। पर वह लागू नहीं हो पाता। अब चुनौती यह थी कि उसे लागू कैसे किया जाए? तथा तिथि कौन सी हो जिसे तय माना जाए। "फिर उनके मन में विचार शुरू हुए की कौन सी तिथि को विश्व हिंदी दिवस के रूप में प्रस्तावित किया जाए? क्या प्रवासी हिंदी दिवस को ही विश्व हिंदी दिवस घोषित किया जाए? क्या पहले विश्व हिंदी सम्मेलन की तिथि को यह दिवस मनाया जाए ? कार्यक्रम का क्या स्वरूप दें? कहां और किस रूप में मनाया जाए? अपने विचारों को कलमबद्ध करते हुए इन्होंने तत्काल विदेश मंत्री यशवंत सिन्हा को 11 जुलाई 2003 को एक लंबा पत्र लिखा- " सातवें विश्व हिंदी सम्मेलन में मैंने एक प्रस्ताव रखा था, जिसे एक मत से पारित किया गया कि वर्ष में एक दिन विदेश मंत्रालय द्वारा विश्व हिंदी दिवस का आयोजन कर, संपूर्ण विश्व का ध्यान हिंदी के महत्व की ओर आकृष्ट किया जाए।

कई देशों सहित भारत सरकार ने किसी विशेष महत्वपूर्ण बिंदु की ओर व्यापक विश्व समुदाय का ध्यान आकृष्ट करने के लिए पहले भी ऐसे दिवसों की घोषणा की है- अंतर्राष्ट्रीय साक्षरता दिवस, विश्व नाट्य दिवस राजभाषा दिवस, प्रवासी दिवस आदि तय किए गए हैं। अतः यदि हम किसी एक दिवस को विश्व हिंदी दिवस घोषित कर, उस दिन सारे विश्व में अपने दूतावासों, उच्चायोगों एवं वाणिज्यिक संस्थानों के माध्यम से विश्व हिंदी दिवस का आयोजन करें तो एक निश्चित समय पर हिंदी की चर्चा सारी दुनिया में होगी और विश्व मीडिया के माध्यम से इसकी ओर उन देशों का भी ध्यान आकर्षण होगा जिनके साथ हमारे राजनीतिक संबंध आज नहीं है पर भविष्य में हो सकते हैं। जहां तक इसके लिए तिथि निर्धारित करने की बात है मैं ने 10 जनवरी का सुझाव दिया था, चूंकि 10 जनवरी 1975 को प्रथम विश्व हिंदी सम्मेलन हुआ था, जिसके बाद ही विश्व स्तर पर हिंदी की व्यापक चर्चा होने लगी।"[4] शैलेंद्र जी ने अपने पत्र में विश्व हिंदी दिवस के भावी स्वरूपो तथा आयोजन के तौर तरीकों को लेकर भी विस्तृत सुझाव दिए ताकि उसे लागू किया जा सके।

शैलेंद्र जी विदेश मंत्रालय में विश्व हिंदी सम्मेलन के प्रस्तावों की अनुवर्ती कार्यवाही के संबंध में समिति के सदस्य थे ।इस विषय को वे निरंतर उठाते रहे तथा "अंततः विश्व हिंदी दिवस की संकल्पना भारत सरकार द्वारा स्वीकार कर ली गई। वर्ष 2006 में पहली बार 10 जनवरी को विश्व हिंदी दिवस मनाया गया। शैलेंद्र जी को संतोष था कि विश्व हिंदी दिवस के प्रस्ताव को कार्यांवित किया गया।"[5] तमाम देशों में यह दिवस बहुत उत्साह से मनाया गया। इसके लिए शैलेंद्र नाथ श्रीवास्तव जी को सम्मानित भी किया गया। परन्तु वो सम्मान की लालसा से उबर चुके थे। अपने जीवनकाल में वे लगातार हिंदी को आगे बढ़ाने के लिए प्रतिबद्ध रहे। हिंदी अब विश्व पटल पर अपना स्थान बना चुकी थी। कुछ पंक्तियों में व्यक्त करूं तो हिंदी स्वयं को कहती है-

"मैं हिंदी हूं ,हिंद की नहीं ,समस्त विश्व की हिंदी हूं

वर्चस्व है मेरा ,मेरी अपनी अद्भुत पहचान है

न मैं हीन हूं , न उपेक्षित हूं , सभी के लिए अपेक्षित हूं

मेरा ज्ञान सहज सरल है, शिक्षितों की शालीनता हूं

संस्कारवान सुसंस्कृत हूं,मेरी सुचिता का सम्मान करो

हिंदी का आह्वान करो, नि:सृत हूं संस्कृत गर्भ से

ईर्ष्या नहीं अन्य भाषा से, स्वर व्यंजन से सुघड़ सजी हूं।"

हिंदी में वह सभी गुण विद्यमान है जो उसे अन्य भाषाओं से पृथक बनाती है। इसके भाव में संवेदना है ,जो स्निग्धता से सब को अपना बनाती है। बल्कि यह कहना ज्यादा सही है कि अपनाने को विवश करती है। यथा

" कथा गीत ग़ज़ल नज़्मों में ढली हूं

मैं हिंद की हिंदी हूं समस्त विश्व की हिंदी हू।

मुझ पर करो सदा अभिमान, देश का ऊंचा होगा मान

हनन करती अज्ञानता का, लहराते सब विजय पताका

मेरा ज्ञान बना स्वाभिमान ,नहीं किसी की बंदी हूं।

अपने आप में समृद्ध संधि हूं मैं समस्त विश्व की हिंदी हूं।"

हिंदी भारतीय संस्कृति की पहचान है। हमारी संस्कृति को सुदृढ़ करने में इस हिंदी का महत्वपूर्ण योगदान रहा है ।हिंदी भाषा ने भारतीय संस्कृति को एक अलग पहचान दी है। भारतीय संस्कृति तो मनुष्य मात्र की अनुत्तम संपत्ति है। मानव व समाज को पहले भी इसकी जरूरत थी आज भी है और भविष्य में भी सदैव रहेगी। जब तक मानव के हृदय में सुख तथा शांति की खोज की जिज्ञासा बनी है, जब तक सभ्यता में सभी के कल्याण के लिए जगह है, जब तक दूसरों की चिंता दुर्गुण नहीं माना जाता, जब तक ज्ञान तथा सहिष्णुता की श्रेयस्कारिता को अस्वीकृत नहीं किया जाता, तब तक भारतीय संस्कृति के आलोक की आवश्यकता मनुष्य को बनी रहेगी। डॉक्टर संपूर्णानंद के शब्दों में देखें तो इनका कहना है कि-"भारत के निवासियों में सबसे बड़ी संख्या हिंदुओं की है। भारतीय संस्कृति की रक्षा का मुख्य भार भी हिंदुओं पर ही है। यह अक्षरशः ठीक भी है

कि यह संस्कृति किसी एक जाति एक वर्ण एक संप्रदाय की संपत्ति नहीं है इसके वर्तमान कलेवर को छोटी-बड़ी कई धाराओं ने पुष्ट किया है। जिससे कुछ का उद्गम भारत के बाहर है लेकिन हम देखते हैं कि समुद्र तक पहुंचते-पहुंचते गंगा में सैकड़ों छोटी बड़ी कई नदियों का जल मिल जाता है और यह मेल ऐसा होता है कि एक नदी का पानी दूसरे पानी से अलग नहीं किया जा सकता। फिर भी भागीरथी की मुख्यधारा वही है जो हिमालय की गोद की में पलकर हरिद्वार के पुण्य क्षेत्र में हमको दर्शन देती है। गंगा का गंगत्व तो इसी धार पर है। इसी प्रकार भारतीय संस्कृति की रक्षा का भार भी। भारतीय संस्कृति का प्रधान अंग वही है जिसका विकास आज से सहस्त्रों वर्ष पूर्व सिंधु तथा सरस्वती के किनारे भृगु ,अथर्व ,अंगिरा वशिष्ठ तथा विश्वामित्र के तपोवन में हुआ था। तब से उसमें बहुत सी देशी-विदेशी संस्कृतियों का योग हुआ है इसने सबको अपनाया है और एक नया रूप दिया है।

भारती आज समस्त विश्व में फैले हुए हैं वे विदेशों में भले रह रहे हैं। पर उनकी जड़ें भारत से जुड़ी हुई है। जिसकारण उनके हृदय में हिंदी भाषा की धमनियां प्रवाहित हैं। उसी से निकल कर वह उस स्थान विषेश को भी अपने रंग में समाहित करती है। हम सबके लिए सदैव यह ध्यातव्य होना चाहिए कि इस धारा से ही भारतीय संस्कृति का भारतीयपन, उसका व्यक्तित्व है। इसकी रक्षा का भी दायित्व हम सब पर हैं। अतः इसे विलुप्त होने से भी बचाना है ।आज हमारी संस्कृति पर पाश्चात्य का अनुकरण बहुत तेजी से हो रहा है जिससे यह चिंता बनती है कि हम अपनी संस्कृति की जड़ों से कटे नहीं, चाहे परिस्थितियां कैसी भी हो। यदि परंपरा लुप्त हो गई तो हमारी संस्कृति विशेषता भी लुप्त हो जाएगी।

जिस प्रकार भारत में पाश्चात्य देशों के अनुकरण हो रहे हैं वह चिंता का विषय है इस पर विशेष ध्यान रखना है कि हम दूसरों के नकल के प्रभाव में आकर अपनी संस्कृति से दूर ना हो इसी चिंता को डॉक्टर संपूर्णानंद ने अपने निबंध " हमारा सांस्कृतिक पतन" में जताया है। लेखक को डर है कि---"राजनीतिक और आर्थिक दृष्टि से अभ्युत्थित होकर भी हम सांस्कृतिक दृष्टि से पतित ही न बने रहें यह डर इसलिए होता है कि हम सबको अपनी पराधीनता दुर्बलता तथा दरिद्रता का पता है परंतु सांस्कृतिक पतन का पता नहीं है हम अपनी आत्मा अपनेपन को खोते जा रहे हैं खो रहे हैं। पर इस बढ़ती हुई क्षति की ओर हमारा ध्यान नहीं गया है। एक दिन ऐसा आ सकता है कि शरीर हमारा रह जाए पर इसमें निवास किसी दूसरी आत्मा का हो जाए ।हमारी आत्मा मर चुकी होगी हमारी अपनी आत्मा। हमारा सांस्कृतिक जीवन दूसरों की प्रतिकृति नकल मात्र होगा।"[6]

वहीं यह इत्मीनान भी है कि हिंदी की भी अपनी कलम विभिन्न विदेशों में रोपी गई है जो अब अपनी पहचान बना चुकी है वह अब पेड़ का रूप ले अपना बड़ा आकार ले रही है। भारतीयों को सचेत रहना है कि हम अपनी संस्कृति का पतन ना होने दें। सभी को अपने कर्तव्यों और फर्ज के प्रति सदैव तत्पर रहना है ।जिस

संस्कृति पर मनुष्य अब तक गर्व करता आया है उसे संभाले रखना भी हम सबके साथ अगली पीढ़ी की जिम्मेदारी है। संस्कृति की रक्षा का सबसे बड़ा दायित्व शिक्षित वर्ग के उस पर है जिसको हमारे समाज का नेतृत्व जन से ही प्राप्त है यानी ब्राह्मण वर्ग। इस समुदाय से। क्योंकि शास्त्रों की रक्षा करके भारत ही नहीं सारे सभ्य जगत पर महान उपकार करने का श्रेय ब्राह्मण को है। हमारी संस्कृति के उत्तरोत्तर वृद्धि में इसका महत्वपूर्ण योगदान है ।हिंदी को समृद्ध करने में उत्तर प्रदेश का महती योगदान अलग से रेखांकित करने योग्य है ।हिंदी को समृद्ध करने में प्रदेश विषेश ही नहीं देश भर के साहित्यकार हिंदी में लिख हिंदी साहित्य को समृद्ध करने में अपना बहुमूल्य योगदान देते रहे हैं और दे रहे हैं ।साहित्य सेवा निरंतर जारी है हिंदी सभी को लुभा अपने रंग में रंग रही है।

किसी भी भाषा को विजयी होने में स्थापित होने में समय लगना व संघर्ष करना ही पड़ता है। तमाम मुश्किलों का सामना करते जूझते आज हिंदी देश ही नहीं परदेश में भी अपनी गहरी पैठ बना चुकी है ।यह दूसरी बात है कि अभी भी हिंदी राष्ट्र की भाषा का स्थान नहीं ले पाई कानूनी तौर पर। साहित्य के द्वारा ही हिंदी अपने राष्ट्र से होती हुई विश्व के तकरीबन देशों में अपनी मधुर, शीतल, प्रेम व आपसी भाईचारे को बढ़ावा देने वाली भाषा बन चुकी है।

इसके विस्तार में जाते हैं तो इतिहास गवाह है कि हिंदी बहुत ही सरल व सहज है संस्कृत के तत्सम शब्दों, क्लिष्ट शब्दों के बाद भी हिंदी सरल ही है। और आमजन भी इसे सहजता से ग्रहण कर लेते हैं। सिर्फ पढ़ा-लिखा वर्ग ही नहीं जो सामान्य वर्ग है शिक्षित नहीं है वह भी हिंदी समझने में सक्षम है यह इसकी विशेषता है। सर्व प्रथम गांधी जी ने ही इसे पहचाना कि हिंदी सहज सरल है। गांधीजी स्वयं अ हिंदी भाषी होते हुए भी स्वयं हिंदी बाकायदा सीखा ही नहीं बल्कि इसके उत्थान तथा प्रचार के लिए अभूतपूर्व कार्य किया। सन 1918 ईस्वी में वे जब हिंदी साहित्य सम्मेलन के अध्यक्ष बने तथा दक्षिण भारत में हिंदी प्रचार के लिए योजनाएं बनाई इन्होंने हिंदी को राष्ट्रीय एकता और स्वदेशाभिमान का आधार माना। दक्षिण अफ्रीका के प्रवास काल में ही उनकी यह मान्यता बन चुकी थी की हिंदी राष्ट्रभाषा का स्थान ले सकती है। भाषा और साहित्य के क्षेत्र में गांधी जी ने अपना अमूल्य योगदान दिया और गहरा प्रभाव डाला। जिससे बहुतों ने प्रेरणा भी ली।

सन 1909 में गांधीजी ने हिंदी स्वराज में लिखा था-"हर पढ़े-लिखे हिंदुस्तानी को अपनी भाषा और सब को हिंदी का ज्ञान होना चाहिए।"[7] यह तो हुई मात्र भारत की बात। पर भारत से बाहर भी हिंदी की जरूरत है। उसके लिए हमारे भारत के विद्वान शैलेंद्र नाथ श्रीवास्तव ने ही सर्व प्रथम यह बात रखी कि हिंदी केलिए के दिन तय किया जाए- 1935 ईस्वी में गांधीजी जब दोबारा अखिल भारतीय साहित्य सम्मेलन इंदौर अधिवेशन के सभापति बने तब उन्होंने कहा---"हिंदी को हम राष्ट्रभाषा मानते हैं वह राष्ट्रीय भाषा होने के लायक है। वही

भाषा भारतीय बन सकती है जिसे अधिसंख्य लोग जानते बोलते हों और जो बोलने में सुगम हो। ऐसी भाषा हिंदी ही है।"[8] गांधी जी ने पहले ही मान लिया था कि हिंदी ही राष्ट्रभाषा बनने के सारे गुण रखती है। गांधीजी के कारण अनेक लोगों ने हिंदी सीखी यह इनका ही प्रभाव था की हिंदी शुद्ध साहित्य की परिधि से बाहर आकर राजनीति के मंच पर स्थापित हुई।

हिंदी भाषा के अनन्य साधकों में काका कालेलकर का नाम बड़े सम्मान के साथ लिया जाता है। सन् 1938 ईस्वी में दक्षिण भारत हिंदी प्रचार सभा के एक अधिवेशन में भाषण देते हुए उन्होंने कहा था----"हमारा राष्ट्रभाषा प्रचार एक राष्ट्रीय कार्यक्रम है।"[9] काका कालेलकर ने हिंदी के प्रचार-प्रसार को अपना अधिकांश समय दिया। इनकी भी मूल भाषा हिंदी नहीं थी। इनकी मूल भाषा मराठी थी। यह हिंदी के प्रति प्रेम ही था कि इन्होंने स्वयं पहले हिंदी सीखी और फिर कई वर्ष तक दक्षिण में अखिल -भारतीय -साहित्य- सम्मेलन की ओर से प्रचार कार्य करते रहे। काका जी का मानना था कि राज्य का सब काम कर हिंदी में चलाना जनता पर बोझ लाधना है यदि भारत में प्रजा का राज चलाना है तो वह जनता की भाषा में ही चलाना होगा। " गांधीजी इन का बहुत सम्मान व इन पर विश्वास करते थे। हिंदी भाषा के प्रचार कार्य में जहां कहीं भी त्रुटि या दोष दिखाई देता या किसी कारण वश उसकी प्रगति रुक जाती तो गांधीजी काका साहब को ही जांच के लिए भेजते।"[7]

राष्ट्रभाषा प्रचार समिति की स्थापना के बाद जब गुजरात में हिंदी प्रचार की व्यवस्था की बात हुई तो गांधी जी ने काका साहब जी को ही चुना। क्योंकि यह बहुत ही जिम्मेदारी से ऐसे कार्य पूरा करते ।अतः इनके योगदान को विस्मृत नहीं किया जा सकता।इनकी चर्चा के बिना हिंदी विकास की बात पूरी नहीं हो सकती है। हिंदी के प्रति इनके गहरा प्रेम का ही परिचायक है कि गैर हिंदीभाषी होकर भी इन्होंने हिंदी साहित्य में अपना उच्च नाम किया। 30 से अधिक पुस्तकों की रचना की। यात्रा वृतांत संस्मरणात्मक निबंध तथा लोकजीवन के अनुभवों पर आधारित लेखन इनका आनंद का विषय था। काकाजी उच्च कोटि के विचारक के साथ विद्वान लेखक की श्रेणी में आते हैं। इन्होंने सरल तथा ओजस्वी भाषा में विचारपूर्ण निबंध लिखें। दक्षिण प्रांत में हिंदी के प्रति अनुराग दिनों दिन बढ़ता ही जा रहा है बहुत से लेखक हिंदी में अपनी गहरी पैठ बना चुके हैं ।हिंदी सिर्फ दक्षिण में ही नहीं समस्त विश्व को अपनी ओर आकर्षित कर चुकी है।

हिंदी को सुदृढ़ करने में तमाम साहित्यकारों का जो महत्व है ,अलग से रेखांकित करने योग्य है।जिनके साहित्य को पढ़ लोग हिंदी पढ़ने को उत्सुक हो रहे हैं। हिंदी साहित्य का अन्य भाषाओं में अनुदित होना, अन्य भाषाओं के साहित्य का हिंदी में अनुदित होना इसकी महत्ता को दर्शाता है ।, हिंदी पढ़ने की लालसा दिनों दिन बढ़ती जा रही है। आज के आधुनिक युवा लेखक लेखिका की लंबी जमात इसे दिनों दिन बढ़ा रहे हैं।

निष्कर्ष-

निष्कर्षत: बस इतना ही कह सकते हैं कि भाषा बोली कोई भी हो यह हमें एकता का पाठ पढ़ाती है। सभी भाषाओं की अपनी विशेषता है तो कुछ दोष भी होते हैं पर हम इसके गुणों पर ज्यादा ध्यान देकर दृष्टि डालें तो यह बहुत आसानी से बोली समझे जाने वाली भाषा की श्रेणी में आती है यही इसकी विशिष्टता है। भाषा हमें आपस में जोड़ती है प्रेम और स्नेह के साथ मानव को मानवता का संदेश देती है यही कार्य हिंदी निरंतर करती हुई अपनी उत्तरोत्तर विकास यात्रा जारी रखती है सभी को प्रेम पाश में बांधती अपना विस्तार विश्व पटल पर करती है। विश्व स्तर पर सभी को अपनाती है और लोगों को अपने से जोड़ने को उत्सुक करती है।

संदर्भ ग्रंथ-

नमन, श्री शैलेंद्र नाथ श्रीवास्तव, संपादक: डॉ सत्यदेव ओझा, सन् 2006 पृष्ठ 75

हमारा सांस्कृतिक पतन, डॉ. संपूर्णानंद, पुस्तक अक्षय वट, पृष्ठ संख्या -23 ,24

हमारा सांस्कृतिक पतन, डॉ. संपूर्णानंद पुस्तक अक्षय वट, पृष्ठ संख्या- 22, 23

वही, पृ- 14

वही, पृ-39

वही, पृ-39

वही, पृ-39-40

…….xx……..